त्रिगुणात्मिका सृष्टि में निस्त्रैगुण्य (सांख्ययोग और वेदान्त के परिप्रेक्ष्य में)

सौरभ तिवारी

शोधच्छात्र
संस्कृत तथा प्राकृत भाषा विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

दार्शनिक परम्परा में गुण शब्द का प्रयोग एवं अनुवर्तन बारम्बार होता रहा है। न्यायवैशेषिक दर्शन में संप्त पदार्थों में गुण को परिगणित किया जाता है–

द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायाभावाः सप्तपदार्थाः।[1]

वहीं मीमांसा में गुण पद का प्रयोग प्राप्त होता है क्रियाविधि के भेद के रूप में–

क्रियारूपाणि च द्विविधा–गुणकर्माणि प्रधानकर्माणिच।[2]

इसी क्रियाविधि के भेद गुणकर्म को व्याख्यायित करते हुए रामेश्वर शिवयोगी भिक्षु मीमांसार्थसंग्रहकौमुदी में कहते हैं–

गुणस्य कर्माग्स्य द्रव्यादेः संस्कारकराणि क्रियाविशेष गुणकर्माणि याऽवघातादीनि।[3]

किन्तु सांख्यदर्शन में तथा वेदान्त में इस गुण पद का प्रयोग व्यापक रीति से दिखायी देता है। यहाँ गुण को समग्र चेतन की संसार बुद्धि का कारण माना गया है। अध्यात्मयोग के बिना बोधगम्य जो भी ज्ञान है वह भी त्रिगुणात्मक ही है। स्वयं श्रीकृष्ण ने गीता में इसकी तरफ संकेत किया है–

त्रैगुण्य विषयो वेदान् निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।

यह वही अध्यात्मयोग है जिसे नचिकेता को उपदेश करते हुए यमराज उस परमतत्व आत्मा को जानने का साधन बताते हैं–

अध्यात्मयोगाधिगमेन देवं मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति।[4]

यह अध्यात्मयोग परमसाधन होने के कारण उस परमसाध्य की प्राप्ति कराने वाला है। इसी अध्यात्मयोग को परिभाषित करते हुए महर्षि पत४जलि कहते हैं–

योगश्चित्तवृत्ति निरोधः।[5]

ध्यातत्य है कि इन चित्त–वृत्तियों के निरोध के प्रसंग में ही महर्षि चित्तभूमियों की चर्चा करते हैं और उनके प्रकार निम्नवत् निरूपित करते हैं–

1. **क्षिप्त**– रजोगुण के उद्रेक से विषयों में संयुक्त रहने वाली अवस्था।
2. **मूढ़**– तमोगुण के उद्रेक के कारण मूर्च्छा आदि व्यापारों में संलग्न चित्त।
3. **विक्षिप्त**– सत्वगुणाधिक्य, कुछ समय समाधि लगने पर रजोगुण के बीच–बीच में प्रभाव के कारण विषयों की ओर दौड़ता है।
4. **एकाग्र**– रजोगुण और तमोगुण के दब जाने से सत्वगुणैका वृत्ति का एक विषय की ओर लगे रहना।
5. **निरुद्ध**– चित्त की समस्त वृत्तियाँ दब जाती हैं, सात्विक वृत्ति का संस्कार मात्र शेष रह जाता है।

यहाँ यह बात विचार करने योग्य है कि जिन सत्वादि गुणों अथवा वृत्तियों का चित्त–भूमियों में महर्षि वर्णन कर रहे हैं, वे निश्चित रूप से त्रिगुणाधारित हैं। बात सत्वादि गुणों के उद्रेक की हो अथवा उपशम् या निरोध की हो त्रैगुण्य ही केन्द्र में होते हैं।

गुणत्रय की अपनी महत्ता, योग्यता और उपयोगिता है। यह समस्त संसार या व्यवहार जो हमें दृष्टिगोचर अथवा अनुभूत होता है गुणत्रय के कारण ही हमारे लिए प्रत्यक्ष या अनुभूति का विषय बनता है। यहाँ तक कि निरुक्तकार ने जो 'जायते, अस्ति, वर्धते, अपक्षीयते' और 'विनश्यति' अवस्थाएँ बतायी हैं, यदि उनका संक्षिप्त रूप से उत्पत्ति, स्थिति और संहार इन तीनों में ही परिगणन किया जाय तो महाकवि बाणभट्ट की दृष्टि अवश्य ही श्रेष्ठ पूज्य है–

रजोजुषे जन्मनि सत्ववृत्तौ स्थितः प्रजानाम् प्रलये तमः स्पृशम्।
अजाय तं सर्गस्थितिनाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः।।[6]

यहाँ कवि ने 'त्रिगुणात्मने नमः' कहा है। अर्थात् त्रिगुणयुक्त परमसत्ता को नमन किया है। अतः जगत की प्रतीति मं त्रिगुण की कारणता निर्बाध रूप से सिद्ध होती है। सांख्यदर्शन जो समग्र सृष्टि का कारण प्रकृति को स्वीकार करता है, वह गुणत्रय को ही प्रकृति का वास्तविक स्वरूप स्वीकार करता है–

त्रिगुणमविवेकि विषयः सामान्यमचेतनं प्रसवधर्मि।
व्यक्तं तथा प्रधानं तद्विपरीतस्तथा च पुमान्।।[7]

तथा–

सांख्ययोगशास्त्र ने सत्वादि गुणों को ही प्रधान कहा गया है।[8]

योग पर प्राप्त व्यासभाष्य में स्पष्ट कहा गया है–

एते गुणाः प्रधानशद्धवाच्यम् भवंति।[9]

अतः यह स्पष्ट है कि प्रकृति का स्वरूप ही त्रिगुणात्मक है। यह प्रकृति ही भिन्न क्रियाओं का आश्रय है–

कार्यकरणकर्त्तव्ये हेतुः प्रकृतिरुच्यते।[10]

इन त्रिगुणों के परिणाम– सुख, दुःख और मोह हैं। अतः यह प्रकृति सुख–दुःख और मोहात्मिका है तथा प्रकृति के समस्त विकार/परिणाम भी त्रिगुणात्मक ही है। सांख्य में यह बात पुरुष के व्याख्यान प्रसग में और भी स्पष्ट हो जाती है, जब अत्रिगुणत्व से पुरुष का कैवल्य धर्म सिद्ध होना बताया जाता है–

अत्रैगुण्याच्च कैवल्यम्।[11]

यह बात यहाँ अवश्य विचारणीय है कि पुरुष तो सदैव अत्रिगुण होता है। इसलिए अत्रिगुणत्व पुरुष में होने से कैवल्य तो उसका स्वतः सिद्ध स्वरूप है। इसी पक्ष (केवली) की ओर संकेत करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं–

गुणत्रय की अपनी महत्ता, योग्यता और उपयोगिता है। यह समस्त संसार या व्यवहार जो हमें दृष्टिगोचर अथवा अनुभूत होता है गुणत्रय के कारण ही हमारे लिए प्रत्यक्ष या अनुभूति का विषय बनता है। यहाँ तक कि निरुक्तकार ने जो 'जायते, अस्ति, वर्धते, अपक्षीयते' और 'विनश्यति' अवस्थाएँ बतायी हैं।

सांख्य योगियों की त्रिगुणात्मिका प्रकृति वेदान्त में कही गयी माया से अभिन्न सिद्ध होती हुई सांख्य योगियों और वेदान्तियों के मूल सिद्धान्त में अविरोध को ही व्याख्यायित करती है।

गुणाः गुणेषु वर्तन्ते इति मत्वा न सज्जते।[12]

जैसे रज्जु में अंधकार के कारण भासित होने वाला सर्प एक बार प्रकाश में रज्जु के वास्तविक रूप को जान लेने पर पुनः भय का कारण नहीं बनता है, उसी प्रकार त्रिगुणात्मिका प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जान लेने वाले पुरुष के लिए पुनः प्रकृति विभ्रम का कारण नहीं बनती है। फिर पुरुष तो स्वयं परम् गति होने के कारण प्रकृति के त्रिगुणात्मक स्वरूप में सदैव संपृक्त नहीं रह सकता है–

प्रकृतेः सुकुमारतरं न किञ्चिदस्तीति मे मतिर्भवति।
या दृष्टास्मीति पुनर्न दर्शन मुपैति पुरुषस्य।।[13]

पुरुष तो त्रैगुण्यराहित्य के कारण ही परमगति स्वरूप है। पुरुष तो सदैव चित्सम्पन्न चैतन्य तथा अत्रिगुण है–

पुरुषान्नपरा किञ्चित्साकाष्ठा सा परा गतिः।[14]

समस्त क्रियाओं की अधिष्ठान होने से यह त्रिगुणात्मिका प्रकृति ही बँधती और मुक्त होती है। पुरुष तो सदा मुक्त और त्रिगुणों के रहित होता है–

संसरति बध्यते मुच्यते च नानाश्रया प्रकृतिः।[15]

वेदान्त दर्शन भी इसी त्रिगुणात्मिका माया को असार–संसार का कारण स्वीकार करता है तथा निस्त्रैगुण अथवा निर्गुण सच्चिदानन्द स्वरूप में स्थित होना ही अपना चरम साध्य मानता है। वेदान्त में अज्ञान का कारण माया को माना गया है। माया से प्रकृति के अभेद को श्वेताश्वरोपनिषद् में व्यक्त किया गया है–

माया तु प्रकृतिं विद्यात् मायिनं तु महेश्वरः।[16]

महाकवि बाणभट्ट ने कादम्बरी के मग्लाचरण में– **'त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः।'** कहकर त्रिगुणात्मक परमेश्वर को नमस्कार किया है। यहाँ यह प्रश्न अत्यन्त स्वाभाविक है कि क्या महाकवि माया अथवा प्रकृति को नमस्कार कर रहे हैं? वस्तुतः **'जन्मनि रजोगुणे, स्थितौ सत्व तथा प्रलये तमः।'** कहने के उपरान्त त्रिगुणात्मने पुल्लिग के चतुर्थी एकवचन का प्रयोग माया–भिन्न किसी अन्य के लिए प्रयुक्त प्रतीत होता है। इस प्रश्न के समाधान हेतु यदि वेदान्तदृष्टया विचार किया जाय तो स्पष्ट है कि अज्ञान के समष्टि से उपहित चैतन्य को ईश्वर कहा गया है–

"इयं समष्टिरूत्कृष्टोपाधितया विशुद्ध सत्वप्रधाना। एतदुपहितं चैतन्यं सर्वज्ञत्वसर्वेश्वरत्वसर्वनियन्तृत्वादिगुणकं सदव्यक्तमन्तर्यामी जगत्कारणमीश्वर इति च व्यवच्छिद्यते सकलाज्ञानावभासकत्वात्।[17]

पुनः यह शटा उपस्थित हो सकती है कि सांख्यकारिका में मग्लाचरण में– **'अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां'** कहकर प्रकृति को अजा के साथ–साथ रजोगुणयुक्ता, सतोगुणयुक्ता तथा तमोगुणयुक्ता कहा गया है। इस पर श्रीकृष्ण गीता में समाधान प्रदान करते हैं–

दैवी ह्येषा गुणमयी मम् माया दुरत्यया।
मायेव ये प्रपद्यन्ते मायामेता तरन्ति ते।।[18]

यहाँ तो माया रूपी प्रकृति को ही नमस्कार किया जा रहा है।

भले ही भगवत्पाद शटराचार्य ने 'जन्माद्यस्ययतः'[19] सूत्र के माध्यम से ब्रह्म को ही जगत का अभिन्ननिमित्तोपादान माना है किन्तु व्यावहारिक जगत की अनुभूति माया के कारण ही है, इस सम्बन्ध में सर्वज्ञात्मकमुनि की पंक्ति द्रष्टव्य है–

जगन्महिन्ना न जगतप्रसिद्धिः न चिन्महिम्नाऽपि जगत्प्रसिद्धिः।
न च प्रमाणाज्जगतः प्रसिद्धिः स्वतोऽस्य मायामयताप्रसिद्धिः।।

अजातवादी गौणपादाचार्य कहते हैं कि न जगत का जन्म होता है, न प्रलय होता है न ही कोई बन्धन हाता है और कोई मुक्त होने के लिए साधना करता है–

न निरोधो न चोत्पत्तिर्न बद्धो न च साधकः।
न मुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थता।।[20]

आचार्य गौडपाद का अजातवाद का सिद्धान्त वर्तमान में 'क्वांटम' का ही पूर्वरूप है और दोनों में बहुत समानता है।

सांख्यों में प्रतिपादित प्रकृति मुक्तता अथवा गौडपाद के अजातवाद का सिद्धान्त ही ज्ञान का चरम है तथा वेदान्त का परम बिन्दु है। इसी ज्ञान का प्रतिपादन विद्वानों की परीक्षा करने वाले भागवत में भी प्रतिपादित किया गया है–

बद्धो मुक्त इति व्याख्या गुणतो में न वस्तुतः।

गुणस्य मायामूलत्वान्न में मोक्षो न बन्धनम्।।

स्पष्ट है कि भारतीय दर्शन में त्रैगुण्य का चिन्तन परम वैज्ञानिक और निस्त्रैगुण्य का साधन है। सांख्यदर्शन में वर्णित त्रिगुणात्मिका प्रकृति वेदान्त की परमगति निर्गुणनिराकार चैतन्य की भी साधिका सिद्ध होती है। इस प्रकार सांख्य योगियों की त्रिगुणात्मिका प्रकृति वेदान्त में कही गयी माया से अभिन्न सिद्ध होती हुई सांख्य योगियों और वेदान्तियों के मूल सिद्धान्त में अविरोध को ही व्याख्यायित करती है। वास्तव में भारतीय मनीषा का यह अद्भुत क्रमिक प्रतिपादन ही बालमति अध्येता को भेद से अभेद तथा द्वैत से अद्वैत तक गमन करने में समर्थ बनाता है।

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची</u> :–

1. तर्क संग्रह, व्याख्याकार, डॉ0 आद्या प्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, प्रयागराज, प्रकाशन वर्ष 2017, पृ0 18
2. अर्थसंग्रह, कामेश्वरनाथ मिश्र, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण 2019, पृ0 111
3. वही
4. कठोपनिषद्, व्याख्याकार : डॉ0 आद्याप्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, प्रयागराज, प्रकाशन वर्ष 2008, पृ0 68
5. पात†जलयोगदर्शनम्, व्याख्याकार : डॉ0 सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव्य, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, संस्करण 2019, पृ0 9
6. महकवि बाणभट्ट कृत कादम्बरी, टीकाकार : प्रो0 कौशल किशोर श्रीवास्तव, प्रकाशन वर्ष 2022, पृ0 15
7. सांख्यकारिका 11, व्याख्याकार तथा सम्पादक : डॉ0 सन्त नारायण श्रीवास्तव्य, चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, संस्करण 2018, पृ0 129
8. वही
9. वही, पृ0 130
10. श्रीमद्भगवद्गीता, 13/20, गीताप्रेस गोरखपुर, पच्चीसवां संस्करण, पृ0 58
11. सांख्यकारिका 11, व्याख्याकार तथा सम्पादक : डॉ0 सन्त नारायण श्रीवास्तव्य, चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, संस्करण 2018, पृ0 188
12. गीता, 3/28, गीताप्रेस गोरखपुर, पच्चीसवां संस्करण, पृ0 58
13. संख्याकारिका 61, व्याख्याकार तथा सम्पादक : डॉ0 सन्त नारायण श्रीवास्तव्य, चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, संस्करण 2018, पृ0 316
14. कठोपनिषद्, व्याख्याकार : डॉ0 आद्या प्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, प्रयागराज, पृ0 89
15. सांख्यकारिका 62, व्याख्याकार तथा सम्पादक : डॉ0 सन्त नारायण श्रीवास्तव्य, चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, संस्करण 2018, पृ0 319

16. श्वेताश्वतरोपनिषद्, गीताप्रेष गोरखपुर।
17. वेदान्तसार, डॉ0 आद्या प्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, प्रयागराज, 2015, पृ0 42
18. श्रीमद्भगवद्गीता, 7/14, गीताप्रेस गोरखपुर, एक सौ पच्चीसवां पुनर्मुद्रण, सम्वत् 2068
19. ब्रह्मसूत्र 2, सत्यानन्द सरस्वती, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, 2019, पृ0 34
20. माण्डूक्यकारिका, 2/32, व्याख्याकार प्रो0 कौशल किशोर श्रीवास्तव, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2017, पृ0 104